बी.ए.सेम-3 कोर हिन्दी पोपर नं- 303

नाम- हिन्दी साहित्य का आदिकाल और निर्गुण भक्ति काव्य
पाठ्य पुस्तकः प्राचीन एवं मध्यकालीन हिन्दी काव्य – सं. प्रो. पूरनचन्द टण्डन
प्रस्तुत कर्ताः डॉ.करसन रावत (नरोडा कॉलेज हिन्दी विभाग)

पाठ्य क्रम

यूनिटः 1 हिन्दी साहित्य का आदिकाल

- हिन्दी साहित्य के आदिकाल के नामकरण की समस्या
- आदिकाल की परिस्थितियों का परिचय
- आदिकाल की प्रमुख काव्य-प्रवृत्तियाँ –
  1. रासो साहित्य
  2. सिद्ध साहित्य
  3. नाथ साहित्य
  4. जैन साहित्य
  5. लौकिक साहित्य

यूनिटः 2 निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा

- भक्तिकाल की परिस्थितियाँ
- निर्गुण भक्ति का स्वरूप और उसकी विशेषताएँ
- ज्ञानाश्रयी शाखा की प्रवृत्तियाँ
- कबीर
- रैदास

यूनिटः 3 निर्गुण प्रेमाश्रयी शाखा

- प्रेमाश्रयी शाखा की प्रवृत्तियाँ

- प्रेमाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि
    1. मलिक मुहम्मद जायसी
    2. कुतुबन
- प्रेमाश्रयी शाखा की प्रमुख कृतियाँ
    1. चांदायन
    2. मधुमालती

यूनिटः 4 निर्गुण भक्ति काव्य –

कबीर के दोहे – 1,3,8,10,25,37,41,42,46,49 कुल – 10

जायसी – नागमती वियोगखण्ड से पाँच पद , पद 1 से 5

हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल विभाजन

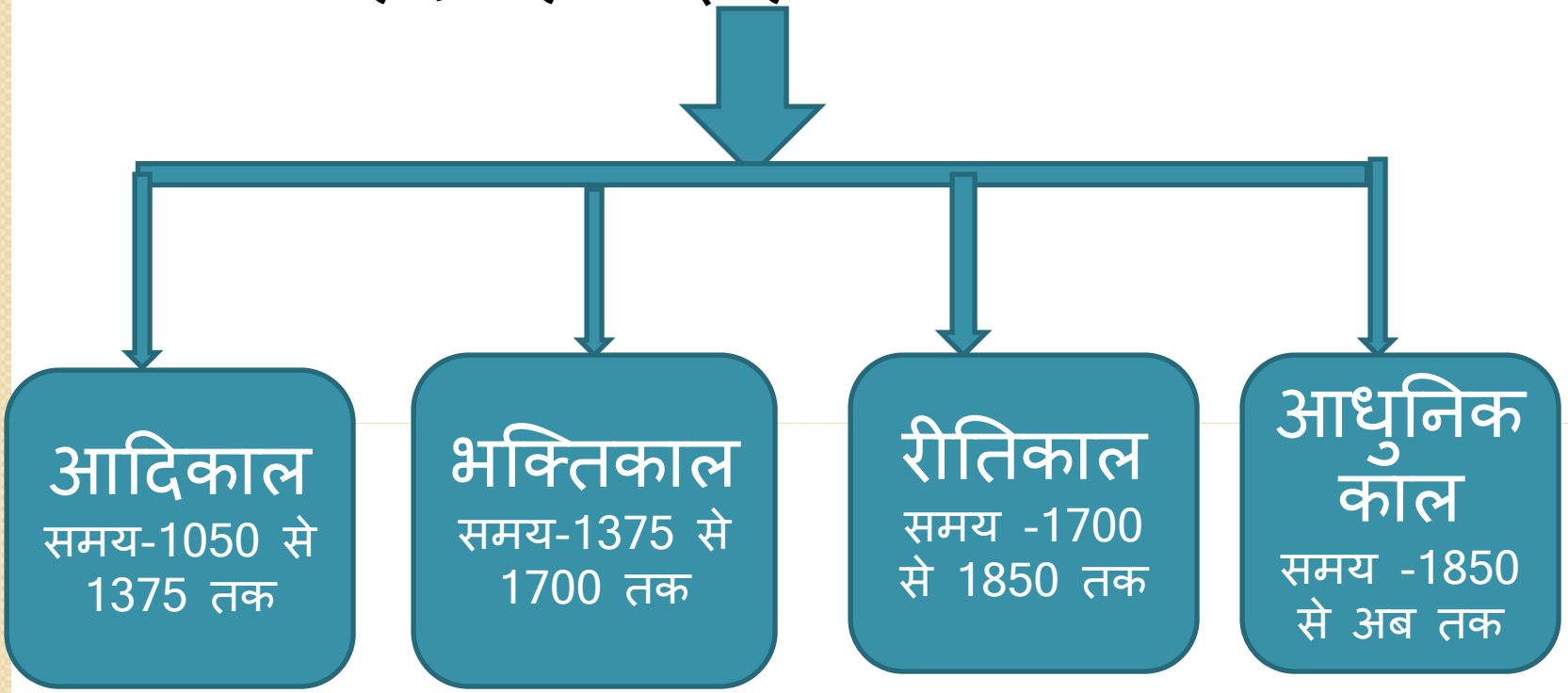

पाठ्य क्रम – डॉ. करसन रावत

यूनिटः 1 हिन्दी साहित्य का आदिकाल

- **हिन्दी साहित्य के आदिकाल के नामकरण की समस्या**
- **आदिकाल की परिस्थितियों का परिचय**
- **आदिकाल की प्रमुख काव्य-प्रवृत्तियाँ –**
  1. **रासो साहित्य**
  2. **सिद्ध साहित्य**
  3. **नाथ साहित्य**
  4. **जैन साहित्य**
  5. **लौकिक साहित्य**

हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल का नामकरण विद्वानों ने इस प्रकार किया है-

1. डॉ॰ ग्रियर्सन - चारणकाल,
2. मिश्रबंधु - आरम्भिक काल
3. आचार्य रामचंद्र शुक्ल- वीरगाथा काल
4. राहुल संकृत्यायन - सिद्ध सामंत युग
5. महावीर प्रसाद द्विवेदी - बीजवपन काल
6. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र - वीरकाल
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी - आदिकाल
8. रामकुमार वर्मा - चारण काल या संधि काल।

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस काल का नाम **वीरगाथा काल** रखा है। इस नामकरण का आधार स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं-

आदिकाल की इस दीर्घ परंपरा के बीच प्रथम डेढ़-सौ वर्ष के भीतर तो रचना की किसी विशेष प्रवृत्ति का निश्चय नहीं होता-धर्म, नीति, श्रृंगार, वीर सब प्रकार की रचनाएँ दोहों में मिलती है। इस अनिर्दिष्ट लोक प्रवृत्ति के उपरांत जब से मुसलमानों की चढाइयों का आरंभ होता है तब से हम हिंदी साहित्य की प्रवृत्ति एक विशेष रूप में बंधती हुई पाते हैं। राजाश्रित कवि अपने आश्रयदाता राजाओं के पराक्रमपूर्ण चरितों या गाथाओं का वर्णन करते थे। यही प्रबंध परंपरा रासो के नाम से पायी जाती है, जिसे लक्ष्य करके इस काल को हमने वीरगाथा काल कहा है।

इसके संदर्भ में वे तीन कारण बताते हैं-

1.इस काल की प्रधान प्रवृत्ति वीरता की थी अर्थात् इस काल में वीरगाथात्मक ग्रंथों की प्रधानता रही है।

2.अन्य जो ग्रंथ प्राप्त होते हैं वे जैन धर्म से संबंध रखते हैं,इसलिए नाम मात्र हैं ।

3.इस काल के फुटकर दोहे प्राप्त होते हैं,जो साहित्यिक हैं तथा विभिन्न विषयों से संबंधित हैं, किन्तु उसके आधार पर भी इस काल की कोई विशेष प्रवृत्ति निर्धारित नहीं होती है।

शुक्ल जी वे इस काल की बारह रचनाओं का उल्लेख किया है-

1. विजयपाल रासो (नल्लसिंह कृत-सं.1355),
2. हम्मीर रासो (शांगधर कृत-सं.1357),
3. कीर्तिलता (विद्यापति-सं.1460),
4. कीर्तिपताका (विद्यापति-सं.1460),
5. खुमाण रासो (दलपतिविजय-सं.1180),
6. बीसलदेव रासो (नरपति नाल्ह-सं.1212),
7. पृथ्वीराज रासो (चंद बरदाई-सं.1225-1249),
8. जयचंद्र प्रकाश (भट्ट केदार-सं. 1225),
9. जयमयंक जस चंद्रिका (मधुकर कवि-सं.1240),
10. परमाल रासो (जगनिक कवि-सं.1230),
11. खुसरो की पहेलियाँ (अमीर खुसरो-सं.1350),
12. विद्यापति की पदावली (विद्यापति-सं.1460)

2. डॉ॰ ग्रियर्सन का मत

डॉ॰ ग्रियर्सन ने हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल को **चारणकाल** नाम दिया है। पर इस नाम के पक्ष में वे कोई ठोस तर्क नहीं दे पाये हैं। उन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास का प्रारंभ 643 ई. से मानी है किन्तु उस समय की किसी चारण रचना या प्रवृत्ति का उल्लेख उन्होंने नहीं किया है। वस्तुतः इस प्रकार की रचनाएँ 1000 ई.स. तक मिलती ही नहीं हैं। इस लिए डॉ॰ग्रियर्सन द्वारा दिया गया नाम योग्य नहीं है।

3. मिश्रबंधुओं का मत

मिश्रबंधुओं ने ई.स. 643 से 1387 तक के काल को **प्रारंभिक काल** कहा है। यह एक सामान्य नाम है और इसमें किसी प्रवृत्ति को आधार नहीं बनाया गया है। यह नाम भी विद्वानों को स्वीकार्य नहीं है।

4. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का मत

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी- उन्होंने हिंदी साहित्य के प्रथम काल का नाम **बीज-बपन काल** रखा। उनका यह नाम योग्य नहीं है क्योंकि साहित्यिक प्रवृत्तियों की दृष्टि से यह काल आदिकाल नहीं है। यह काल तो पूर्ववर्ती परिनिष्ठित अपभ्रंश की साहित्यिक प्रवृत्तियों का विकास है।

5. डॉ॰ रामकुमार वर्मा का मत

डॉ॰रामकुमार वर्मा-डॉ वर्मा ने आदिकाल को दो खण्डों में विभाजित कर दिया है- **सन्धिकाल** और **चारणकाल** संधिकाल भाषा की और संकेत करता है और चारणकाल एक वर्ग विशेष का बी होता है] इन्होंने हिंदी साहित्य के प्रारंभिक काल को चारणकाल नाम दिया है। इस नामकरण के बारे में उनका कहना है कि इस काल के सभी कवि चारण थे, इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता। क्योंकि सभी कवि राजाओं के दरबार-आश्रय में रहनेवाले, उनके यशोगान करनेवाले थे। उनके द्वारा रचा गया साहित्य चारणी कहलाता है। किन्तु विद्वानों का मानना है कि जिन रचनाओं का उल्लेख वर्मा जी ने किया है उनमें अनेक रचनाएँ संदिग्ध हैं। कुछ तो आधुनिक काल की भी हैं। इस कारण डॉ॰वर्मा द्वारा दिया गया चारणकाल नाम विद्वानों को मान्य नहीं है।

6. राहुल संकृत्यायन का मत

राहुल संकृत्यायन- उन्होंने 8वीं से 13 वीं शताब्दी तक के काल को **सिद्ध-सांमत युग** की रचनाएँ माना है। उनके मतानुसार उस समय के काव्य में दो प्रवृत्तियों की प्रमुखता मिलती है-

1. सिद्धों की वाणी- इसके अंतर्गत बौद्ध तथा नाथ-सिद्धों की तथा जैनमुनियों की उपदेशमुलक तथा हठयोग की क्रिया का विस्तार से प्रचार करनेवाली रहस्यमूलक रचनाएँ आती हैं।

2. सामंतों की स्तृति- इसके अंतर्गत चारण कवियों के चरित कांव्य (रासो ग्रंथ) आते हैं, जिनमें कवियों ने अपने आश्रय दाता राजा एवं सामंतों की स्तृति के लिए युद्ध, विवाह आदि के प्रसंगों का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया है। इन ग्रंथों में वीरत्व का नवीन स्वर मुखरित हुआ है। राहुल जी का यह मत भी विद्वानों द्वारा मान्य नहीं है। क्योंकि इस नामकरण से लौकिक रस का उल्लेख करनेवाली किसी विशेष रचना का प्रमाण नहीं मिलता। नाथपंथी तथा हठयोगी कवियों तथा खुसरो आदि की काव्य-प्रवृत्तियों का इस नाम में समावेश नहीं होता है ।

7. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी- इन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रारंभिक काल को **आदिकाल** नाम दिया है। विद्वान भी इस नाम को अधिक उपयुक्त मानते हैं। इस संदर्भ में उन्होंने लिखा है- वस्तुतः हिंदी का आदि काल शब्द एक प्रकार की भ्रामक धारणा की सृष्टि करता है और श्रोता के चित्त में यह भाव पैदा करता है कि यह काल कोई आदिम, मनोभावापन्न, परंपराविनिर्मुक्त, काव्य-रूढ़ियों से अछूते साहित्य का काल है। यह ठीक वहीं है। यह काल बहुत अधिक परंपरा-प्रेमी, रूढ़िग्रस्त, सजग और सचेत कवियों का काल है। आदिकाल नाम ही अधिक योग्य है क्योंकि साहित्य की दृष्टि से यह काल अपभ्रंश काल का विकास ही है, पर भाषा की दृष्टि से यह परिनिष्ठित अपभ्रंश से आगे बढ़ी हुई भाषा की सूचना देता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य के आदिकाल के लक्षण-निरूपण के लिए निम्नलिखित पुस्तकें आधारभूत बतायी हैं-

1.पृथ्वीराज रासो, 2.परमाल रासो, 3. विद्यापति की पदावली, 4.कीर्तिलता, 5.कीर्तिपताका, 6.संदेशरासक (अब्दुल रेहमान), 7.पउमचरिउ (स्वयंभू कृत रामायण), 8.भविषयत्कहा (धनपाल), 9.परमात्म-प्रकाश (जोइन्दु), 10.बौद्ध गान और दोहा (संपादक पं.हरप्रसाद शास्त्री), 11.स्वयंभू छंद और 12.प्राकृत पैंगलम्।

नाम निर्णय

इस प्रकार हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल के नामकरण के रूप में **आदिकाल नाम ही योग्य व सार्थक है, क्योंकि इस नाम से उस व्यापक पुष्ठभूमि का बोध होता है, जिस पर परवर्ती साहित्य खड़ा है।** भाषा की दृष्टि से इस काल के साहित्य में हिंदी के प्रारंभिक रूप का पता चलता है तो भाव की दृष्टि से भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक की सभी प्रमुख प्रवृत्तियों के आदिम बीज इसमें खोजे जा सकते हैं। इस काल की रचना-शैलियों के मुख्य रूप इसके बाद के कालों में मिलते हैं। आदिकाल की आध्यात्मिक, श्रृंगारिक तथा वीरता की प्रवृत्तियों का ही विकसित रूप परवर्ती साहित्य में मिलता है। इस कारण आदिकाल नाम ही अधिक उपयुक्त तथा व्यापक नाम है।

आदिकाल का नामकरण समाप्त

प्रस्तुत कर्ताः डॉ. करसन रावत